International Journal of Advanced Educational Research
ISSN: 2455-6157
Impact Factor: RJIF 5.12
www.educationjournal.org
Volume 3; Issue 1; January 2018; Page No. 442-443

प्रगतिवादी काव्य की सामाजिक चेतना

उपासना
सहायक प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, गौड़ ब्राह्मण महाविद्यालय, रोहतक, हरियाणा, भारत।

सारांश
प्रस्तुत शोधपत्र में प्रगतिवादी युग में सामाजिक भावना का चित्रण प्रस्तुत किया गया है । प्रगतिवाद काव्य की वह काव्यधारा है जो सन् 1936 में मार्क्सवादी दर्शन से प्रभावित हुई । जिसमें सामाजिक चेतना और भावबोध को प्रत्यक्ष रूप से देखा जा सकता है । प्रगतिवाद को सामाजिक यथार्थवाद के नाम पर ही चलाया गया, वह साहित्यिक आन्दोलन है जिसमें जीवन और यथार्थ को छायावादी काल से ही आगे बढ़ने की प्रेरणा मिली । प्रगतिवादी काव्य की संज्ञा उस काव्य को दी गई जो छायावाद के उपरान्त सन् 1936 ई॰ के आसपास शोषण के विरुद्ध नई चेतना लेकर रचा गया । छायावाद की व्यक्तिवादी काव्यधारा की प्रतिक्रिया भी प्रगतिवादी काव्य के रूप में हुई । यह काव्यधारा काल्पनिक संसार पर आधारित न होकर जीवन के यथार्थ से जुड़ा हुआ है ।

मुख्य शब्द: प्रगतिवादी कवि, सामाजिक यथार्थ, समतामूलक समाज।

प्रस्तावना
प्रगतिवाद सामाजिक यथार्थ की अभिव्यक्ति को ही रचना का उद्देश्या मानता है । शोषण का विरोध करना ही प्रगतिवाद का मूल तत्व है । प्रगतिवादी कवियों ने उस साहित्य को व्यर्थ माना है जो समाज के सत्य को नकार कर कल्पना के महल खड़ा करता है ।
मार्क्सवादी विचारधारा से प्रभावित होकर काव्य रचना करने वाले कवियों में प्रमुख हैं – केदारनाथ अग्रवाल, नागार्जुन, शिवमंगल सिंह सुमन, त्रिलोचन शास्त्री, नरेन्द्र शर्मा आदि । पन्त, निराला और दिनकर की कविताओं में भी प्रगतिवादी स्वर उपलब्ध होता है ।
मार्क्स समाज में साम्यवादी व्यवस्था स्थापित करना चाहता था । इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए वह हिंसात्मक क्रान्ति को साधन के रूप में स्वीकारता है । समाज को वह दो वर्गों में विभक्त करता है– शोषक एवम् शोषित वर्ग । शोषकों के प्रति आक्रोश एवम् शोषितों के प्रति सहानुभूति प्रगतिवादी साहित्य में देखी जा सकती है । मार्क्सवाद में ईश्वर व धर्म के प्रति आस्था व्यक्त की गई है तथा नारी के प्रति यथार्थ दृष्टिकोण पर बल दिया गया । प्रगतिवाद साम्यवाद का पोषक है और पूंजीवाद का शत्रु है ।
तत्कालीन समय में अनेक सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक एवम् राजनीतिक विसंगतियाँ उभररही थीं । द्वितीय विश्वयुद्ध एवम् बंगाल का अकाल भारत की गरीब जनता में भुखमरी फैला रहा था । समाज दो वर्गों में बंट चुका था । इस वर्गीकरण का कारण जातिगत नहीं बल्कि आर्थिक विषमता था । उच्च वर्ग अपने बल पर निम्न वर्ग का लगातार शोषण कर रहा था । ऐसी स्थिति में साम्यवाद भारतीय जनमानस के लिए प्रेरणा और राहत का स्रोत था।
शोषक वर्ग के अन्तर्गत जमींदार, मिल मालिक, पूंजीपति, उद्योगपति एवम् धनी वर्ग के लोग हैं जबकि शोषित वर्ग के अंतर्गत किसान श्रमिक, मजदूर आदि गरीब लोग हैं । शोषक वर्ग पुरानी शक्तियों का प्रतीक है जबकि नवीन शक्तियाँ शोषित, गरीबों, किसानों और मजदूरों का समाज है।
प्रगतिवादी कवि जनवादी हैं, वे रूढ़ियों के विरोधी हैं । वे मानते हैं कि पुराने मूल्यों को नष्ट होना चाहिए, तभी नवीन जीवन मूल्यों का विकास होगा, इसलिए सुमित्रानंदन पंत कहते है। –

"द्रुत झरो जगत के जीर्ण पत्र । हे शुष्क जीर्ण है त्रस्त ध्वस्त ।
हिमपात पीत मधुवात भीत । तुम वीतराग जड़ पुराचीन ।।"

प्रगतिवादी कवि चाहते हैं कि एक ऐसे समाज का निर्माण हो जहाँ वर्ग भेद ने हो । वे समतामूलक समाज प्रगतिवादी कवि चाहते हैं कि एक ऐसे समाज का निर्माण हो जहाँ वर्ग भेद न हो । वे समतामूलक समाज की स्थापना करना चाहते हैं । धर्म, जाति, भाषा, ऊँच–नीच का वर्गभेद समाप्त होने पर ही ऐसे समाज का निर्माण हो सकता है । प्रगतिवादी कवि उस व्यवस्था को नष्ट करना चाहता है जिसमें अमीरों के कुत्ते तो सुविधां भोग रहे हैं और गरीब का बालक भूख से रो रहा है । दिनकर जी लिखते हैं –

श्वनों को मिलता दूध–वस्त्र भूखे बालक अकुलाते है। ।
माँ की छाती से चिपक ठिठुर जाड़े की रात बिताते हैं।

सामाजिक विषमता को दूर करने पर प्रगतिवादी कवि विशेष बल देता है । निराला पूंजीवादियों को समाज का शोषक बताते हुए अपनी कविता'कुकुरमुता' में प्रतीकों के माध्यम से कहते हैं –

"अब सुन वे गुलाब/भूल मत जो पाई खुशबू रंगों आब।
खून चूसा खाद का तुने अशिष्ट/डाल पर इतरा रहा कैपेटलिस्ट।।"

प्रगतिवादी कवि अपने विश्वासों और संवेदनाओं से जनवादी है । उन्होंने निम्नवर्गीय लोगों की सामाजिक स्थिति के प्रति अपनी सहानुभूति व्यक्त की है । कैसी विडम्बना है कि जो श्रमिक कारखानों में वस्तुओं का निर्माण करता है, वही उनके उपयोग से वंचित है –

"ओ मजदूर ओ मजदूर ।
तू ही सब चीजों का कर्ता,
तू ही सब चीजों से दूर ।।"

प्रगतिवाद सामाजिक यथार्थ की अभिव्यक्ति को ही रचना का उद्देश्य मानता है । साहित्य का उद्देश्य प्रचार नहीं है क्योंकि प्रचार साहित्य को हल्का बना देता है । प्रगतिवाद रचना और आलोचना के क्षेत्र में सर्वथा नवीन दृष्टिकोण लेकर आया ।
नागार्जुर सामाजिक कुरूपता, राजनीतिक अव्यवस्था और धार्मिक अन्धविश्वास पर चुभते हुए व्यंग्य करते हैं । शिक्षा पद्धति पर उनका एक करारा व्यंग्य है –

''घुन खाये शहतीरों पर की, बाहर बड़ी विधाता बाँचे,
फटी भीत है, छत चूती है, आले पर बिस्तुइया नाचे ।
बरसाकर बेबस बच्चों पर मिनट–मिनट में पाँच तमाचे,
इसी तरह से दुखरन मास्टर, गढ़ता है आदम के सौंपे।।

मुक्तिबोध समस्त दीन–हीन दलितों की पीड़ा से परिचित है । उन्हें लगता है कि इस अंतहीन पीड़ा से एक महाकाव्य लिखा जा सकता है –

"मुझे भ्रम होता है कि प्रत्येक पत्थर में चमकता हीरा है ।
हरेक छाती में आत्मा अधीरा है ।''

केदारनाथ अग्रवाल अकाल पीड़ित व्यक्ति की मर्म व्यथा को इस प्रकार चित्रित करते है –

''बाप बेटा बेचता है, भूख से बेहाल होकर
धर्म धीरज प्राण खोकर हो रही अनरीति बर्बर ।।''

नागार्जुन सता, व्यवस्था एवं पूँजीवाद के प्रति अत्यधिक आक्रोशित है। सामाजिक विषमता की बढ़ती हुई खाई सभी दुःखी कर देती है, क्योंकि उन्होंने देखा कि शोषित वर्ग अभावों की चक्की में पिस रहा है, कृषकों अनेक समस्याओं से जूझ रहा है, धार्मिक भरपेट भोजन नहीं जुटा पाता किन्तु उच्च वर्ग भोग–विलास के साधनों में पानी की तरह धन बहा रहे हैं । ये लोग दोहरी जिन्दगी जी रहे हैं । बाहर से खादी पहनते हैं पर अन्दर से कसाई हैं ।

जमींदार है, साहूकार हैं, बनियां हैं, व्यापारी हैं ।
अन्दर–अन्दर विकट कसाई, बाहर खद्दरधारी हैं ।।''

बालकृष्ण शर्मा नवीन ने शोषित वर्गों के प्रति सहानुभूति दर्शाने तथा प्राचीन परम्पराओं को नष्ट करने के लिए कान्ति को जागृत करनें के लिए लिखा है –

कवि कुछ ऐसी तान सुनाओ,
जिससे उथल–पुथल मच जाये ।''

नागार्जुन आज की पोथी आजादी पर अपनी वेदना व्यक्त करते हुए कहते हैं

"कागज की आजादी मिली
ले लो दो–दो आने में ।''

प्रगतिवादी कवि लोक कवि है । प्रगतिवादी कवियों की लोक दृष्टि अत्यन्त व्यापक है । वे स्पष्ट भाषा में पूंजीपत्तियों की लोलुपता और स्वार्थपरता पर व्यंग्य कराते हैं और शोषित वर्ग में शोषण के प्रति क्रान्ति की चेतना जाग्रत करते हैं ।

समतामूलक समाज की स्थापना करना ही प्रगतिवादियों का प्रमुख लक्ष्य है । उनकी सम्पूर्ण मान्यताएं इसी लक्ष्य की ओर केन्द्रित हैं ।

संदर्भ

1. हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास, रामस्वरूप चतुर्वेदी ।
2. डॉ॰ नगेन्द्र, हिन्दी साहित्य का इतिहास
3. डॉ॰ हजारी प्रसाद द्विवेदी, साहित्य का मर्म
4. शशि प्रकाश चौधरी, हिन्दी साहित्य के आत्म संघर्ष का एक महत्त्वपूर्ण दस्तावेज (लेख)